Rohtas Mahila College, SASARAM

Study Material : SANSKRIT

Dr. Savitri Singh,
Associate Professor, Sanskrit

B.A. (HONS) Part III

Paper - V

Topic : ऋक्सूक्त-निकर के आधार पर अग्निदेवता के स्वरूप का वर्णन

ऋग्वेद-संहिता विश्व-धर्म-दर्शन का प्राचीनतम अभिलेख है। अपने जीवन में शुभ के उपादान और अशुभ के निवारण के निमित्त आर्यों ने भौतिक जगत के नियामक तत्व के रूप में देवताओं को मान्यता दी थी। देवता की कल्पना तीन भावों पर आधारित थी- दान, द्योतन तथा दीपन। विभिन्न काम्य वस्तुओं तथा परिस्थितियों को प्रदान करना, स्वयं प्रकाशित होना एवं दूसरे को प्रकाशित करना देवता का लक्षण माना गया। इस भावना के अनुसार प्रायः देवताओं के मानवीय रूप का वर्णन ऋग्वेद में मिलता है।

पृथ्वी स्थानीय देवताओं में अग्नि एक प्रमुख देवता हैं। ऋग्वेद के 200 सूक्तों में इनकी अकेली स्तुति है तथा अन्य कई सूक्तों में अन्य देवताओं के साथ इनकी प्रार्थना है।

निरुक्त में (7/14) अग्नि का निर्वचन किया गया है कि ये अग्रणी होते हैं। यज्ञों में सर्वप्रथम (अग्रे) स्थापित होते हैं (प्रणीयते)। जिस किसी पदार्थ के समक्ष ये विनत होते हैं (उसे ग्रहण करते हैं), उसे अपना अंग बना लेते हैं।

अग्नि के तीन प्रमुख कर्म हैं - (1) हव्य पदार्थ को देवताओं तक पहुँचाना, (2) देवताओं को यज्ञ में बुलाकर लाना तथा (3) दृष्टिविषयक प्रकाशादि कर्म।

ऋग्वेद में अग्नि के त्रिविध जन्म का वर्णन है। प्रथम जन्म यज्ञ में दो अरणियों से होता है। ये अरणियाँ (यज्ञ में अग्नि को उत्पन्न करनेवाले दो काष्ठ खण्ड) अग्नि के माता-पिता हैं, जिन्हें वे जन्म के साथ ही खा जाते हैं (जायमानो मातरा गर्भो अत्ति, ऋ० 10/79/4)। दस अंगुलियाँ अरणियों का मन्थन करती हैं, वे भी अग्नि की माताएँ कही गयी हैं। इस कार्य में शक्ति लगती है। अतः अग्नि 'ऊर्जोनपात्' तथा सहसःपुत्रः (शक्ति के पुत्र) भी कहे गये हैं। प्रतिदिन उत्पन्न होने वाले अग्निदेव युवा और 'यज्ञियानां प्रथमः' (प्राचीनतम) भी हैं। यह अग्नि का पार्थिव रूप है।

अग्नि का द्वितीय जन्म अन्तरिक्षस्थ जल से होता है। यह वैद्युताग्नि है। इसीलिए कुछ सूक्तों में अग्नि को 'अपां नपात्' भी कहा गया है। वस्तुतः मेघों के गर्भ में विद्यमान विद्युत रूप अग्नि ही 'अपां नपात्' है।

क्रमशः →